अध्याय : 2

रघुवीर सहाय : मानवतावादी कवि

अध्याय : 2

रघुवीर सहाय : मानवतावादी कवि

प्रस्तावना

नई कविता का मानवतावाद एक ऐसा मानवतावाद है जिसे परंपरागत कवियों की भाँति भारतीय-अभारतीय, हिंदू-मुसलमान, शोषक-शोषित जैसे भिन्न-भिन्न सांप्रदायिक विभागों में नहीं रखा जा सकता। सत्य तो यह है कि "नये कवि का झुकाव अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर अधिक दिखाई देता है। इसलिए वह उस व्यापक मानवता के प्रति अधिक आस्था रखता है, जो समूह मानव और समूह चेतना में अपनी लघुता का बलिदान करती रही है।"

आज युग-बोध, आधुनिकता, युवा-लेखन की समस्याएँ आदि विषयों पर जब चर्चा की जाती है तब उसका सीधा-सा अर्थ होता है - इस युग के मानव की समस्याएँ। इसे दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं - बदलते हुए संदर्भों में मानव के नए मूल्य युगीन जीवन मूल्यों और वस्तुस्थितियों का चित्रण किया गया है।[1]

आज का मानव आश्रयहीन, भीतग्रस्त, गंधहीन, जलनपूर्ण, आडम्बरमय जीवन की आँधी में टूटा, त्रासित, क्षुधित, अनन्त भावनाओं और वासनाओं को संजोये, हिंसक और खण्डित व्यक्तित्व वाला है। उसका यह विकास या रूपान्तरण सहसा आधुनिक जीवन की विकासशील यांत्रिक स्थितियों के कारण हुआ है। काव्य कभी जीवन निरपेक्ष नहीं रहा, वह सापेक्षित वस्तु है, अतएव उसमें इस प्रकार का चित्रण उसके जीवन्त होने का लक्षण है।

काव्य के ये ही स्वर विविध रूपों में विभिन्न कवियों की कविताओं में हमें आज आत्यंतिकता के साथ प्राप्त होते हैं। युवा पीढ़ी का तात्पर्य नयी पीढ़ी से लिया जाता है। इन कवियों के सामने आधुनिक युगबोध की विकरालता अधिक तेजी के साथ प्रगट हो रही है। आज अधिक तेजी के साथ यांत्रिकता, बौद्धिकता, शिक्षित बेकारी, असंतोष, क्षोभ, भ्रष्टाचार, पक्षपात, शोषण, मानसिक दासतायें और व्यक्तित्व का विखण्डन बढ़ रहा है।

कवि अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए, सिद्धांन्तों को व्यावहारिकता प्रदान करने के लिए, समाज को अपने दृष्टिकोन के अनुरूप रूप देने के लिए, पीडित आहत मध्यवर्गीय मानव को दिशा-निर्देश करने के लिए और मानवता के पथ-प्रदर्शन के लिए विभिन्न साधनों को अपनाता है। उनके द्वारा अनेक प्रकार के संकेत करता है। कभी वह परम्परागत रूढ़ियों को तोड़ने में सुखानुभव की बात कहकर समाज को उन्हें तोड़कर प्रगति पथ पर अग्रेसर होने के लिए प्रोत्साहित करता है।

जीवन में व्याप्त पीड़ा, वेदना, कुरूपता, विद्रूपता, मृत्यु, प्रतारणा इत्यादि उतने ही सशक्त सत्य हैं जितने की आनन्द, सुख, शान्ति, सुन्दरता, जीवन और जीवन की संघर्षशील प्रवृत्ति की उदात्त भावना। पीड़ा से जूझना, कुरूपता के साथ संघर्षरत होना, विद्रूपता को विस्थापित करने की चेष्टा तक ले जाकर मुक्ति के प्रति प्रयासशील होना समूची मानव दृष्टि की जागरूकता है। ये तत्व जीवन की गति को स्वीकार करके आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं। अतः अपने दृष्टिकोन के अनुरूप कवि यथार्थ के विभिन्न चित्रों द्वारा ही जीवन की विरूपता को दूर करने का प्रयत्न करता है। समाज की वर्तमान व्यवस्था उसकी दृष्टि में अनिष्टकारिणी एवं दुःखदायी है। अतः वह उसे समाप्त करना चाहता है। यही कारण है कि वह यह कहे बिना नहीं रहता -

"सिंहासन ऊँचा है समाध्यक्ष छोटा है
अगणित पिताओं के
एक परिवार के
मुँह बाये बैठे हैं लड़के सरकार के

लूले काने बहरे विविध प्रकार के
हंक्ती सी दुर्गन्ध से भर गया है समाकक्ष।"[2]

नये कवियों का लक्ष्य मानव तथा उसका दुःखदर्द है। उसका कल्याणसाधन उसका कर्तव्य है। पूँजीवादी व्यवस्था से उसका सिद्धान्ततः विरोध है क्योंकि उससे समाज का हित-साधन सम्भव नहीं। किन्तु राजनीतिक प्रचारवाद एवं थोथे उपदेशवाद में विश्वास न करने के कारण नया कवि समाज की इस व्यवस्था तथा उसके उत्तरदायी ठेकेदारों पर व्यंग्य-वर्षा करके उसके सुधार संस्कार का प्रयत्न करता है। कविता महाविनाश में भी नव-निर्माण के बीज खोज निकालती है, पशुत्व की पराकाष्ठा से भी चिन्तित न होकर विश्व को मानवता का पाठ पढ़ाती है। समाज के उत्थान के लिए मानवता के मंगल के लिए जिस निष्ठा, धैर्य एवं सहिष्णुता की आवश्यकता है।

कवि रघुवीर सहाय मानवतावादी भूमिका को स्पष्ट किए बिना नहीं रहते। आज समाज में शिक्षण लेना जैसे मूर्खता हो गयी है। सब लोग पढ़-लिखकर बेकार की जिंदगी बिता रहे हैं। कवि की भी कुछ ऐसी ही अवस्था है तब कवि कह उठा है -

"मूर्ख मूर्ख सब हो गये मेरी ओर
छोड़कर कायरता
लिख दिया गया स्कूलों में सुभाषित
"मरता क्या न करता"।"[3]

संस्कृति के बदलते हुए मूल्यों में मानवतावाद का उदय हुआ तथा उसके सम्मुख छोटी-छोटी बातों को दबा दिया गया। कवि अपने आँसूओं को पीकर अपने सपने को बचा रखता है। उसके आँसू कोई नहीं देखता। वह अपना जीवन बहुत ही भयानक परिस्थितियों में ढालकर जिया है। जो सही है उसे देखने का प्रयास कोई नहीं करता और सच लोगों को ही कायर या मूर्ख बना दिया जाता है। "मूर्ख मूर्ख मेरी ओर" इस कविता में कवि के यही भाव स्पष्ट हो गए हैं -

"एक आँसू पिया मैंने
एक चौकट बिस्तरे पर एक गीला बेखबर
तन लिया मैंने
बचा सपने को
अँधेरा-आखिरी तुक
यही होगी -
- जिया मैंने ।"[4]

सामाजिक मूल्य हो या राजनीतिक, आर्थिक मूल्य हो अथवा सांस्कृतिक या दार्शनिक, सबका अन्तिम लक्ष्य है मानव। अर्थात बिना मानव के इन मूल्यों के अस्तित्व को सहज ही नकारा जा सकता है। जिन मूल्यों की स्थापना पूर्ववर्ती अध्यायों में की जा चुकी है, उन सभी मूल्यों को अन्ततः मानव-मूल्यों में समाविष्ट किया जा सकता हैं। मानव-कल्याण एवं बृहत्तर मूल्यों की स्थापना के लिए उस समाज का तिरस्कार भी करना पड़ता है। मानव-विकास की लम्बी यात्रा के पश्चात् जो मानव-मूल्य उभर सके हैं, उन पर विचार करने से पूर्व मानव-कल्पना के विभिन्न आयामों पर विचार कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है।

कवि रघुवीरजी का कहना है कि मानवता आज जैसे नाममात्र रह गयी है। हर समय मानवता का गला घोंट दिया जाता है। इन्सान एक दूसरे के प्रति प्यार की भावना रखने के बजाय घृणा, नफरत करता है। आज मानवता जैसे बड़े लोगों के हाथों में हैं जिनका राजनीति के साथ संबंध है। हर समय जो सामान्य जनता है उन पर अन्याय, अत्याचार किए गए हैं, इन्हीं लोगों को ही मानवता, भाईचारा, प्रेम का पाठ सिखाया जाता है। आज जो लोग मानवता का हर समय खून कर देते हैं उन्हीं लोगों का जो खतरनाक हैं हर समय समाज को या मनुष्य को उन लोगों से डर रहता है ऐसे लोगों को मुख्यमंत्री, राज्यपाल के द्वारा छोड़ा जाता है। समाज में इतने सारे मानवों के प्रति ध्यान नहीं दिया जाता। वे अपनी जिन्दगी कैदियों की जिन्दगी की तरह जी रहे हैं और जीवन के अन्तिम घड़ी की

राह देख रहे हैं। ऐसे कितने लोग समाज में मर जाते हैं इन लोगों का कुछ भी विचार नहीं किया जाता परन्तु जब राजा की मौत होती है तब इतिहास में भी नगाडा बजता है। ऐसी विषमता की अवस्था को देखकर कवि रघुवीर सहायजी का मानवतावादी हृदय कह उठा है -

"एक झीना-सा परदा था दोनों के बीच
लोगों के और मौसम के
मैंने उसे हटा दिया
कालातीत समय चारों ओर से घिर गया
न जीवन था उसमें न मृत्यु थी
सिर्फ बेहिसाब असंगतियों की एक धड़कती सत्ता
कास्मास फूल की खुली आँखें
अन्दर से बाहर को देखने लगीं
और धूप ने उठा रंगों को मानमानी जगह रोप दिया।"[5]

आधुनिकता की धारणा का सम्बन्ध निरपेक्ष न होकर सापेक्ष है और इस दृष्टि से, वैज्ञानिक प्रगति तथा उससे उद्भूत जीवन तथा विश्व दृष्टि ने मानव मन के सामने अनेक जीवन आयाम ही नहीं खोले हैं, पर इन नव आयामों ने मानवीय ज्ञान को अधिक विस्तृत और तार्किक भाव पर प्रतिष्ठित किया है। आधुनिकता की धारणा को समझने के लिए वैज्ञानिक परिदृष्टि को समझना आवश्यक है क्योंकि अनेक वैज्ञानिक प्रत्ययों ने आधुनिकता की दृष्टि को अर्थवत्ता प्रदान की है। निष्पक्ष रूप से देखा जाए तो आधुनिकता का समसामयिक रूप विज्ञान से काफी सीमा तक प्रेरित रहा है। आज के आधुनिक कवियों की आधुनिकता पर लिखे गये काव्य को समझने के लिए वैज्ञानिक मनोवृत्तियाँ या भावों को समझना आवश्यक है। मानव समाज की आधुनिक संरचना इसी तथ्य को लेकर विकसित हो रही है। एक ओर वैज्ञानिक प्रजनन और तकनीक है जो मूल्यवान होते हुए भी मानवीय जीवन को दूषित और कुंठित कर रही है।

कवि रघुवीर सहाय की कविता "खडी स्त्री" इसका ज्वलंत उदाहरण है। इस कविता में सामाजिक सम्बन्धों के बीच मानवीय टकराव और मानवीय संवेदनाओं का चित्रण है। कविता का मूल स्वर स्त्री की यथास्थिति पूर्ण कारुणिक चित्र और उसकी मानसिकता को निर्माण किया है। कवि रघुवीर सहाय मानवतावादी होने के कारण उनके मन में मानवता के प्रति आस्था है। जहाँ-जहाँ उन्हें मानवता का विडम्बन दिखाई देता है वहाँ उन्होंने उस आशय को अपने कविता में स्थान देने का प्रयत्न किया है। जो स्त्री सिर्फ खड़ी है वह न किसी के साथ बातें करती है न किसी के साथ हँसी-मज़ाक। वह उसी चौराहे पर खड़ी है उसकी ओर कोई ध्यान नहीं देता। फिर भी वह सम्पूर्ण हुई जैसे की उसने अपनी जान ही छोड़ दी। "खड़ी स्त्री" इस कविता में दुबली और थकी हुई औरत का चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि का मानवतावादी हृदय कह उठा है -

"तभी
वह
बोली -
नहीं
हँसी
नहीं
उसने देखा
और मैंने देखा कि वह अब सम्पुर्ण हुई।"[6]

रघुवीर सहाय की कविता में सामाजिक विसंगतियाँ, संघर्ष और मानवता के अस्तित्व की लड़ाई स्पष्ट रूप से व्यक्त होती है। उसमें शोषण और अत्याचार के विरूद्ध आवाज बुलन्द की गयी है। इतना ही नहीं तो शोषक वर्ग को स्वर दिया है। वह अपनी सीमा लाँघकर सामाजिक विसंगतियों को अभिव्यक्त कर रही है। यही कारण है कि उनकी कविता संघर्ष की कविता है। मानवतावादी कविता है। जो जीवन की विभिन्न स्थितियों को उजागर करती है। इस प्रकार रघुवीरजी

की कविता विलासिता की कविता न रहकर लोक समस्याओं की कविता बन गयी है। इन्हीं लोक समस्याओं से जुड़ी "शराब के बाद का सवेरा" कविता में कवि ने विषमता के साथ मानवता को प्रस्तुत किया है। सहायजी की कविताएँ सामाजिक विषमता के विरूद्ध मानवीय मूल्यों की स्थापना के साथ यह मानव पीड़ा अन्तःकरण बिन्दु तक पहुँचती है।

कवि रघुवीर सहायजी कहते हैं कि आज समाज की अवस्था बहुत ही दर्दनाक है। एक लड़की इतनी डर गयी है कि डर के मारे उसकी बुद्धि मारी गयी है और वह अपना दुःख नहीं बता पा रही। जो बूढे हैं, बेबस हैं वह लाचार हो गए हैं इस लाचारी के कारण वह दूसरों के सामने हाथ फैल रहे हैं परन्तु उन्हें कोई कितना, क्या दे वह भी बताने का साहस आज उनमें नहीं है। हर माँ अपने बेटे का भविष्य उज्ज्वल देखना चाहती है पर उसकी यह इच्छायें अधूरी रह जाती है वह इस भूमि को छोड़कर चली जाती है। इन्सान अपने बेटे को देखकर, उसके भविष्य के बारे में सोचकर निराश हो जाता है। उसे अपने ही बेटे बोझ दिखायी देते हैं तब वह अपने दिल को मारकर शराब का सहारा लेता है। आज इन्सान, इन्सान को बचाये रखने के बजाय खुद को बचाने के फिक्र में लगा रहा है। उसे दूसरों की बिल्कुल परवाह नहीं है। वह दूसरे लोगों का हर समय शोषण कर रहा है। अपने को बचाने के लिए आदमी को ही आदमी बचाव की ढाल बना रहा है तब कवि रघुवीर सहाय कह उठे हैं -

"दिन निकला फोडकर
चित्रगुप्त-सभा के सचिव के दाँत
नाम कहाँ तक याद रक्खूँ
लोगों की उनकी तोंद से जानता हूँ
पहले मुझे वही मिली देवीदयाल वर्मा में
कितनी शान्तिभरी घुटनभरी
आदमी से आदमी के बचाव की ढाल।"[7]

वर्तमान व्यवस्था की विसंगतियों और उसके दुष्परिणामों के बीच पीस रहे आदमी के कष्टों और विद्रोह से एकाकार होना ही रघुवीर सहायजी की कविता का स्वभाव बन गया है। कवि ने सामाजिक व्यग्रता और मानवीय मूल्यों से कविता को जोड़ा है उनकी कविता मनुष्य को उसकी सही पहचान कराती है और सच को सच और झूठ को झूठ, कह देने में हिचकिचाहट नहीं अनुभव करती। रघुवीर सहायजी की कविताएँ सामाजिक व्यवस्था का एक हिस्सा बन गयी है, जिसमें सारा संसार साँस ले रहा है तथा विश्वव्यापी छल-छद्म के होते हुए भी सुन्दर से सुन्दरतम संसार बनाने का चिराग जला रहा है। कवि कहीं सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह करता है तो कहीं अमानुषिकता पर बौखला उठता है। इनकी अनेक-सी कविताओं में जनवादी स्वर सुनाई पड़ता है। कवि शोषितों की खुशहाली के लिए अंगारों का गीत गाता है। इनकी "खब्ती औरत" कविता में राजनीति पर व्यंग्य करते करते सर्वहारा वर्ग के प्रति विशेष आस्था और मानवतावादी के भाव दिखाई पड़ते हैं।

कवि रघुवीर सहाय "खब्ती औरत" इस कविता में कहते हैं - हमारा देश आझाद होकर बहुत वर्ष बीत गए परन्तु जो साधारण लोग हैं उनकी परिस्थिति में थोडा-सा भी परिवर्तन नहीं हुआ। आज भी जो गरीब औरतें हैं वह अपनी समस्या प्रधान मंत्री को कहना चाहती हैं उसके गोद में एक बच्चा है, एक पैदल वह अपने दोनों बच्चों को लेकर भटक रही है पर उसकी भेंट प्रधान मंत्री से कभी नहीं होती और वह भटक-भटककर ही पागल हो जाती है। समाज की यह प्रमुख जो समस्या है उसके कम-से-कम मानवतावादी रूप में तो अखबारवालों ने छपना चाहिए था परन्तु वह इन्सान का अपमान नहीं छप सकता। समाचार खुद ही एक अत्याचार बन गया है। जो लोग मजदूरी करते हैं उन्हें भी अपनी मजदूरी नहीं मिलती तब कवि उनकी आँखों में सिर्फ तिरस्कार देखता है। जब उपप्रधान मंत्री सफेद कपड़े पहनकर लोक-सभा में भाषण देने के लिए आते हैं तब वे लोगों को सांत्वना देने के लिए कहते हैं हम सब कपड़ो के नीचे नंगे हैं और मशीन की ओर देखकर मुस्कराते हैं। ऐसी विषम अवस्था को देखकर कवि रघुवीर सहायजी

का मानवतावादी हृदय गरीब लोगों की व्यथा प्रस्तुत करते हुए कह उठा है -

"हम सब जानते थे गरीब क्या चीज होती है
हम सब गरीबी को बिसरा चुके थे
हममें से एक ने कहा रोज कम खाना मेरे दो बच्चे को तोड़ता
मरोड़ता कुतरता है रोज-रोज कुछ समझे ?
बुझते हुए धीरे-धीरे एक दिन हजार लोग रोज
सहने के अन्तिम कगार पर खडे हो
भारतवर्ष में फलाँग पड़ते हैं
व्यक्ति-स्वातन्त्र्य के समुद्र में कोई धमाका नहीं।"[8]

समाज की चुनौतियों में जब कोई परिवर्तन नहीं आया। उल्टे अँधेरे की शक्तियाँ अधिकाधिक बर्बर और खौफनाक होती गयी। पूँजीवादी औद्योगिकता और तथाकथित आधुनिकता के नाम पर विसंस्कृतिकरण के फलस्वरूप समाजगत सम्बन्धों में भी परिवर्तन आया। एक अच्छे और सुखमय भविष्य का सपना हमसे बहुत दूर अलग-थलग जा गिरा। व्यक्ति के लिए अपना अस्तित्व एवं अपनी अस्मिता महत्वपूर्ण हो उठे। उसे हर कहीं अजनबियत और परायेपन का मुकाबला करना, व्यक्ति को अपना "होना" प्रमाणित करना जादा जरूरी लगने लगा। ऐसे में एक सर्जनात्मक रचनाकार के लिए जरूरी था कि वह मनुष्य की दिनोंदिन लुप्त होती जा रही संवेदनाओं को बचाकर रखे और इस तरह मनुष्यता को विशृंखलित होने से बचाये। वह निरन्तर अमानुषिकृत होती सभ्यता एवं संस्कृति के बीच उन मूल्यों को जीवित रखे जो मनुष्य को मनुष्य का दर्जा देते हैं। मनुष्य को मनुष्यता की वसुन्धरा से स्खलन का संकट समकालीन कविता के परवर्ती धारा ने बड़ी शिष्टता के साथ महसूस किया। रघुवीर सहाय ने लिखा -

"दर्द दर्द मैंने कहा क्या अब नहीं होगा
हर दिन मनुष्य से एक दर्जा नीचे रहने का दर्द
गरजा मुस्टंडा विचारक - समय आ गया है

कि रामलाल कुचला हुआ पाँव जो घसीटकर
चलता है अर्थहीन हो जाय।"[9]

मानवतावाद का प्रश्न तथा मूल्यों का प्रश्न मानव और उसके जीवन से जुड़ा हुआ है। रघुवीर सहायजी कहते हैं मूल्य हमारे वास्तविक जीवन-सन्दर्भ में ही विकसित होते हैं।

नई कविता को मानवीय साक्षात्कार की कविता कहना आखिरी हद तक उसकी अहमियत और अच्छाई को स्वीकार करना है। यह आस्था और विश्वास की कविता है। जिसका गहरा संबंध मानवीय अनुभवों और स्थितियों से हैं। कतिपय आलोचकों ने नई कविता को अनास्था और अंधकार की कविता कहा है। नए कवियों में यह अनास्था और अविश्वास इतिहासबोध के कारण है, जो कुछ भी हो नई कविता से पूर्व की काव्यधारा में जीवन-जगत् के विस्तार से इतना गहरा साक्षात्कार नहीं मिलता है।[10]

अज्ञेय, शमशेर बहादुर सिंह, गिरिजाकुमार माथुर, मुक्तिबोध तथा रघुवीर सहाय की कविता में मानवीय आस्था में "एकोऽहं बहुस्याम" की उद्घोषणा की है। वस्तुतः इनके कविता में अनगिनत मानव सम्बन्धों का अन्वेषण और उल्लेख किया गया है।

रघुवीर सहायजी ने जो चित्र प्रस्तुत किए हैं उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि जिस मानव का चित्र उपस्थित किया गया है, वह महामानव या अतिमानव नहीं, बल्कि हमारे ही बीच का समूह मानव है। आम आदमी जिसे नए कवियों और आलोचकों ने "लघुमानव" की संज्ञा दी है, उसे नयी कविता ने कई शक्लों में उपस्थित किया है। फिर भी इस मानव और इसकी आस्था के अन्वेषण की आवश्यकता इसलिए है कि इतिहास के "जनसत्ता के अधिनायक" अथवा देवदूत या मसीहा ने अपनी समस्त महत्ता को लघुमानव की बलि देकर ही अपनाया है। रघुवीर सहायजी ने अपनी कविता में जिस लघुमानव की प्रतिष्ठा की है, वह अपनी

लघुता में महत्ता लिए हैं। सहायजी ने इतिहास-नियामक की तुलना में मामूली आदमी का अधिक उल्लेख किया है। प्रायः कवि ने अपनी कविता में अभिजात्य को अस्वीकारा है और अदना आदमी को स्वीकारा है।

"पाँच दल आपस में समझौता किए हुए
बड़े-बड़े लटके हुए स्तन हिलाते हुए
जाँघ ठोंक एक बहुत दुर देश की विदेश नीति पर
हाँकते डाँकते मुँह नोचे लेते हैं
अपने मतदाता का।"[11]

नई कविता के कवि रघुवीर सहाय की कविता मामूली आदमी के सन्दर्भ में अप्रासंगिक नहीं मालूम पडती है। उनका यह मानवीय सरोकार बनावटी नहीं बल्कि ठोस सच्चाइयों की पहचान उनकी कविता में ज्यादा साफ और वास्तविक है। रघुवीर सहायजी की कविता में मानवीयता से जुड़ने की कोशिश साफ-साफ नज़र आती है।

रघुवीर सहाय की कविता "भीड़ में मैकू और मैं" में सामाजिक दुःख दर्द की कथा है। उसमें "लघुमानव" ही है। इनकी कविताओं के कारण मानवीयता का साक्षात्कार होता है। वास्तविकता को काव्य में अवतरित करने का ऐसा सीधा प्रयत्न इतने प्रबल आग्रह के रूप में कभी नहीं हुआ था। रघुवीर सहाय के कविता में आसपास बिखरे हुए जीवन की संपूर्ण जटिलता एवं संकुलता से साक्षात्कार कराता है।

"जब समाजवादी दल खोज रहा था लडके
मन्त्री बनने के लिए अगली सरकार में
मैं खोज रहा था भीड में रामलाल
वहीं मिल जाए अगर मैकू न मिले तो।"[12]

12923
A

"कवि रघुवीर सहायजी ने "अकाल" शीर्षक कविता के द्वारा सभ्य भाषा में आज की दुधारी प्रजातांत्रिक व्यवस्था एवं उसके जन-प्रतिनिधि की काफी धुलाई की है। दुर्भिक्ष और उससे उत्पन्न समस्याओं का चित्र उपस्थित करता हुआ कवि जो अपनी प्रतिक्रिया या अपना आक्रोश व्यक्त करता है - वह जन-प्रतिक्रिया या जनाक्रोश ही है। सार्वजनिक पीड़ा का अनुभव कवि ने वैयक्तिक स्तर पर किया है।"[13] कवि ने "अकाल" कविता के माध्यम से समाज की दयनीय अवस्था का वर्णन किया है। इन दृश्यों को देखकर कवि का मानवतावादी हृदय तील-तील हो उठा है -

"फूटकर चलते-फिरते छेद
भूमि की पर्त गयी है सूख
औरतें बाँधे हुए उरोज
पोटली के अन्दर है भूख
आसमानी चट्टानी बोझ
ढोह रही है पत्थर की पीठ
लाल मिट्टी लकड़ी ललछौर
दाँत मटमैले इकटक दीठ।"[14]

कवि रघुवीर सहायजी ने "मेरा प्रतिनिधि" कविता में बहुत हद तक इसी भावना या विचार की पुनरावृत्ति होती है। आजादी के बीस वर्ष बाद भी कवि सुख सन्तोष का अनुभव नहीं करता है। अतः वह अपने बचपन की आज़ादी को छीनकर लाने के लिए आकुल-व्याकुल है। उपदेश सूनकर क्लेश की वृद्धि हुई है, सुख-समृद्धि की नहीं - ऐसा ही कवि का कथन है। इस कविता में कवि सत्ता का विरोध करने लगता है क्योंकि वह मानवता का खून होते हुए नहीं देख सकता। कवि का कहना है कि आज तक हमने बहुत सुना हैं, अब इसके आगे कुछ भी नहीं सुन सकते और जब सुनने का प्रयत्न हमारी ओर से होता हैं तो हमारे क्रोध में वृद्धि ही हो जाती है। तब कवि कह उठा है -

"हाहाकार
उठता है घोष कर
एक जन
उठता है रोष कर
व्याकुल आत्मा से आक्रोश कर
अकस्मात
अर्थ
भर जाता है पुरूष वह
हम सबके निर्विवाद जीने में।"[15]

आज के परिप्रेक्ष्य में पुराने मानवीय मूल्य अर्थहीन हो गए हैं। अतः आज के सन्दर्भ में व्यक्ति नये जीवन मूल्यों की तलाश और उसकी स्थापना करना चाहता है। अब रूढ़ि और परम्परा के प्रति व्यक्ति का विश्वास नहीं रह गया है। वह पुराने जीवन मूल्यों को संदर्भानुकूल नये ढंग से देखना चाहता है, क्योंकि आज व्यक्ति का अधिष्ठाता भावना नहीं विवेक है। आज भावना की जगह विचार ने ले ली है। अब जीवन का संचालन केंद्र "भावना" उतनी नहीं है जितना "विचार" या जीवन के प्रति बौद्धिक दृष्टि-सम्पन्न चेतना जो अन्ततः विचार से अभिन्न है। आज का मानव अपने को आदर्श की चहार दीवारी में बन्द करके नहीं देखना चाहता है, क्योंकि सामान्य जीवन काफी कुरूप और खुरदुरा हो गया है। वह स्वप्न से अधिक यथार्थ का पक्षधर है इसलिए आज के मानव का उद्देश्य यह नहीं रह गया है कि वह केवल जीवन के प्रीतिकर पक्षों को उद्‌घाटित करें। आज का व्यक्ति अशिव तत्वों की अवहेलना करके जीवित नहीं रह सकता है, क्योंकि वह जीवन का एक महत्वपूर्ण संदर्भ हो चुका है। तात्पर्य यह है कि आज यथार्थ की उपेक्षा नहीं की जा सकती है, क्योंकि जीवन-मूल्यों की प्रतिष्ठापना में उसकी अहम् भूमिका है। आज का मनुष्य भगवान की महिमा न मानकर जीवन का कटु यथार्थ मानता है।

साहित्य मूलतः मानव मूल्यों का संवाहक है। अतः रघुवीर सहायजी ने मानवी गरिमा के प्रति संवेदनशील रहकर मानव मूल्यों को तथा मानवता को प्रतिष्ठित किया है। रघुवीर सहायजी की रचनाओं में मानवता की अभिव्यक्ति हुई है। काव्य में मानव-मूल्य की प्रतिष्ठा द्वारा ही सुखद मानव-भविष्य की आशा की है। रघुवीर सहायजी ने मानवीय वृत्तियों, स्थितियों, सम्बन्धों और मर्यादाओं के आपसी द्वन्द्व को स्वयं झेलने की लगातार कोशिश की है।

रघुवीर सहाय मानव-मूल्य की वास्तविक प्रतिष्ठा के लिए "समानता" को पहली शर्त मानते हैं। उनके अनुसार - मानवीय गरिमा की प्रतिष्ठा की एक शर्त यह भी है कि हम मानव मात्र की नियति से अपने को आबद्ध समझे···साथ ही वे समस्त सिद्धान्त जो मानव नियति को पूर्व निर्धारित मानते हैं, वे मनुष्य से विकल्प की स्वतंत्रता और संकल्प की गरिमा छीन लेते हैं। क्योंकि फिर मनुष्य के अपने निर्णय का कोई महत्व ही नहीं रह जाता है, अपने विवेक की कोई सार्थकता नहीं रह जाती। ···यह केवल भारवाही पशु की भाँति जुए में कंधे डालकर ही अपना सहयोग दे सकता है। इसलिए बार-बार इस बात पर बल देना आवश्यक है कि - नियति नहीं है पूर्व निर्धारित, उसको प्रतिक्षण मानव निर्णय - बनाता मिटाता है। कवि का कहना है कि हम अपनी अन्तरात्मा से निर्देशित होकर अपने विवेकपूर्ण आचरण के द्वारा जिस अंश तक नियति का साक्षात्कार करते हैं, उसी अंश तक उस मानव की नियति वास्तविक होती है।

रघुवीर सहायजी ने खंडित मानव-मूल्य की पुनर्प्रतिष्ठित के लिए उपनिवेशवादी, सामंती तथा पूँजीवादी प्रकृतियों के विरूद्ध शोषित-शासित के समर्थन में संघर्ष कवि-कर्म बनाया है। उन्होंने मनुष्य की सम्पूर्ण स्थितियों से साक्षात्कार किया है जिसमें यथार्थ का जटिल विश्लेषण है। कवि अपने काव्यों के माध्यम से तमाम विद्रूपताओं और भयानकताओं के बीच नये मानव-मूल्य के प्रति संघर्षशील एवं आशान्वित है। रघुवीर सहाय मानवतावाद को स्थान देने में सतत जागरूक हैं।

मानवीय गौरव, स्वातंत्र्य, समानता, स्वाधीन चिन्तन, लोककल्याण आदि हमारी संस्कृति और परम्परा के महत्वपूर्ण तत्व रहे हैं। परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद सभी स्थापित मान्यताएँ और तत्व टूटते-बिखरते नजर आते हैं। इसलिए ऐसी स्थिति में मानवीय गौरव और मानवीय मूल्य को स्थापित करने की एक ज्वलंत समस्या साहित्यकार के सम्मुख उपस्थित हुई। अमानुषिक, शक्तिशाली आधुनिक विज्ञान ने स्वार्थी मानव के हाथ में अनेक आणविक अस्त्र थमा दिए जो सम्पूर्ण विश्व की मानवता के लिए गम्भिर हादसे का संकेत है। "फिल्म के बाद चीख" कविता में कवि ने समस्या का समाधान ढूँढने का प्रयत्न किया है। साहित्य में मानवतावाद की प्रतिष्ठापना की जायेगी तो सुखद मानव भविष्य का निर्माण हो सकेगा। जीवन-मूल्य की प्रतिष्ठा के लिए मर्यादायुक्त आचरण, नूतन सृजन, निर्भयता, साहस, ममता तथा प्रेम अपेक्षित है। कवि रघुवीर सहाय कह उठे हैं -

"इस हाथ को देखो
जिसमें हथियार नहीं
और अपनी घुटन को समझो, मत
घुटन को समझो अपनी
कि भाषा कोरे वादों से
वायदों से भ्रष्ट हो चुकी है सबको।"[16]

कवि रघुवीर सहाय ने निर्भयता और साहस के साथ मर्यादायुक्त आचरण में मानवतावाद का निर्वाह किया है। कवि कहता है कविता में यदि सकुशल स्थापित करने की चेष्टा करे तो मंगलमय मानवता की अपेक्षा की जा सकती है। कवि ने अपने दायित्व का निर्वाह लिखकर सम्पूर्ण मानवता के भविष्य के साथ कवि की सहानुभूति है। मानवतावाद की जो अभिव्यक्ति या अभ्यर्थना हुई है वह वर्तमान के विघटित जीवन मूल्यों को देखकर ही। कवि मानवतावाद को भविष्य में मंगलमय बनाने के लिए हर समय अपने काव्य में स्थान देता है।

रघुवीर सहाय की दृष्टि मानव मूल्यों के अवदात अन्वेषण और उसके अवतरण पर केन्द्रित है। उन्होंने आज के व्यक्ति को प्रतिनिधि बनाकर वर्तमान सन्दर्भ में खपाते हुए नये जीवन-मूल्यों को स्थापित किया है। रघुवीर सहायजी की दृष्टि मानवतावादी है। अतः उन्होंने समष्टि-कल्याण के लिए व्यष्टि-लाभ को अपने काव्य में महत्व नहीं दिया है।

कवि ने आधुनिक टूटते-बिखरते जीवन-मूल्यों के सन्दर्भ में युगीन समस्याओं का समाधान ढूँढा है। कदाचित उन्होंने वैयक्तिक प्रसन्नता के मूल्य पर लोक-कल्याण के भाव की उपेक्षा अपनी कविता में नहीं की है। बदलते हुए युग के अनुरूप उनकी रचना में मानव-मूल्य की प्रतिष्ठापना के सम्बन्ध में गम्भीर चिन्तन, मनन किया है। कवि युद्ध या तलवार से मानवीय समस्याओं का समाधान नहीं चाहते हैं बल्कि अपने विवेक को समूह के निर्णयानुसार लोकहित में समाहित कर देते हैं।

यह निर्विवाद है कि परिवेश के परिवर्तन की करारी चोट परम्परागत जीवन मूल्यों को सहनी पड़ती है। आज का आदमी परंपरित मान्यताओं एवं मूल्यों को बिना जाँच-पड़ताल के स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। साथ ही यह भी समझता है कि आधुनिकता परिप्रेक्ष्य में संपूर्ण परंपरित मूल्य अप्रासंगिक हो गए हैं। नई कविता में "शायद पहली बार मूल्यों को तानाशाही को चुनौती दी गई है। नई कविता के लिए मूल्य न सनातन है, न अंतिम और न निरपेक्ष···।"[17]

रघुवीर सहाय की कविताएँ सन 1960 के आसपास और उसके बाद के वातावरण की सजीव अभिव्यक्ति है। कवि ने सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थितियों का आधार लेकर आज के व्यक्ति को जो "पिंजड़े में कैद सुग्गे" की हालत में है और जहाँ "देश की व्यवस्था का विराट वैभव व्याप्त है चारों ओर एक कोने में दुबक ही तो सकता है।" उसकी स्थिति को अपनी कविताओं में उतारा है। स्वाधीनता प्राप्ति के -

"बीस वर्ष
खो गए भर में उपदेश में
एक पूरी पीढ़ी जनमी पली पुसी क्लेश में
बेमानी हो गयी अपने ही देश में"[18]

इसप्रकार कवि ने समाज और देश ही नहीं पूरे युग की आत्मा को पहचाना है। इन बीस वर्षों में देश में फैले ढोंग, आडम्बर, कपट, झूठ, स्वार्थलिप्सा और भ्रष्टाचार के कारण व्यक्ति, समाज और शासन के आपसी सम्बन्ध टूट गए हैं। सामाजिक जीवन का आत्मविश्वास जाता रहा। हमारी आशाओं को, मानवता को आघात पहुँचा। अनास्था और अस्वीकृति का उदय हुआ। देश की इस सच्ची स्थिति के बीच कवि "हमें घुमाता हुआ ले चलता है"। "हाँ-हाँ करता हुआ, हे-हे करता हुआ, दल का दल", "महासंघ का मोटा अध्यक्ष", "तोंददानी गोंददानी नेता" मंचों पर आदर्श बघारने वाले मंत्री और नेता को दर्शाता हुआ कवि यथास्थिति को उघाड़ता है जो मानवतावाद को डूबा रहे हैं -

"बाँध में दरार
पाखंड वक्तव्य में
मिलावट दवाई में
नीति में टोटका
अहंकार भाषण में
आचरण में खोट हर हफ्ते मैंने विरोध किया
सचमुच स्वाधीन हो जाने का इतना भय
एक दास जाति में।"[19]

रघुवीर सहायजी ने अपने पूर्ववर्ती कवियों की भाँति लोकमंगल की कामना का दंभ नहीं भरा है। हा, "लोग मार तमाम लोगों" के सम्बन्ध की कविताएँ यह जरूर है। कहीं कोई नारेबाजी नहीं है, न ही मसीहा या नेतागिरी का अंदाज दिखाया है। इसप्रकार कवि मानवतावाद को लेकर कवि की कविताएँ परम्परा से

भिन्न है। क्योंकि -

"कितना अच्छा था छायावादी
एक दुःख लेकर वह एक गान देता था
कितना कुशल था प्रगतिवादी
हर दुःख का कारण वह पहचान लेता था
कितना महान था गीतकार
जो दुःख के मारे अपनी जान लेता था
कितना अकेला हूँ मैं इस समाज में
जहाँ सदा मरता है एक और मतदाता।"[20]

यह "मतदाता" जो सिर्फ यही कर सकता है कि "कितना आसान है रख लेना अपने पास अपना वोट क्योंकि प्रतिद्वन्द्वी अयोग्य है।"

रघुवीर सहायजी की अनेक कविताएँ मानवतावादी कविता हैं। इनकी "लोकतन्त्रीय मृत्यु" कविता में देश और काल के साथ मानवता की विडम्बना को प्रस्तुत किया गया है। इसमें वर्तमान व्यवस्था के खिलाफ विरोध का स्वर उभरा है और मानवतावाद प्रकट होता है -

"एक झीना सा परदा था दोनों के बीच
लोगों के और मौसम के
मैंने उसे हटा दिया।
कालातीत समय चारों ओर से घिर आया
न जीवन था उसमें, न मृत्यु थी
सिर्फ बेहिसाब असंगतियों की धड़कती सत्ता।"[21]

ये कविताएँ एक बुद्धिजीवी जागृत कवि का अपने देश की जनता के साथ "सही सम्बन्ध" व्यक्त करती है जिससे उसे "नफरत है सच्ची और निस्संग" पर फिर भी "जिन पर" उसका "क्रोध बार-बार न्योछावर" होता है। क्योंकि इनकी

बेबसी को कवि जानता है। उसे इस भीड़ की "गंध और रंग" तक की पहचान है। सामान्य व्यक्ति जिसकी "लालसा तिलतिल कर मिट गई", जो बेजुबान हो तकलीफ उठाता है - उसका गहरा अहसास कवि को है -

"एक शब्द कहीं नहीं कि वह लड़का कौन था
क्या उसके बहनें थी
क्या उसने रक्खे थे टीन के बक्से में अपने अजूबे
वह कौन कौन से पकवान खाता था
एक शब्द कहीं नहीं वह एक शब्द जो वह खोज
रहा था जब वह मारा गया।"[22]

कवि की इन सबके प्रीत व्यक्तिगत करूणा और सहज आत्मीयता उस यथार्थ अनुभव के निजी साक्षात्कार के कारण है जो कविताओं को इतनी सक्षम व प्रतिभाशाली बना देती है।

रघुवीर सहाय की कविताओं का परिवेश जीता जागता और अत्यन्त व्यापक है। इसमें प्रत्येक तब के लोग हैं। हमारी ही दुनिया के जाने-पहचाने - जिनमें हमें रोजमर्रा के जीवन में देखते हैं। नेहरू, लोहिया, मोरारजी आदि नेता हैं तो उसी वर्ग के मुसद्दीलाल,नेताराम , भोलारामदास आदि भी हैं। एक ओर महासंघ का मोटा अध्यक्ष, मुस्टंडा विचारक, घिघियाता उपकुलपति, कुंकुआते राजकवि और घूरे पर फुदकते सम्पादक हैं तो दूसरी और भीख खाती हुई दुधमुंही बच्ची, मैला चीकट लड़का भी है। ये चलते फिरते लोग इनकी कविताओं में एक नया अर्थ पाते हैं। नेमिचन्द्र जैन के शब्दों में - "परिचित; अपरिचित के बीच यह संयोजन एक अनोखा सम्बन्ध, इस संसार को न तो झूठा पड़ने देता है, न पुराना या घिसापीटा।"[23]

"आत्महत्या के विरूद्ध" संग्रह की छोटी कविताओं में "हरी गहरी रात" "खडी स्त्री", "प्रार्थना घर", "चढती स्त्री" आदि में रघुवीर सहाय का कवि उभरा है। ये कविताएँ मानवीय करूणा से भीगी हैं।

अशोक वाजपेयी के मतानुसार - "वह ऐसे युवा कवि की रचना है जो अपने इस खास प्रजातन्त्र के ज़ास मोड़ पर खड़ा अपनी आँखे खोले पूरे साहस से अपनी कविता में हमारी दुनिया देख रहा है, छटपटा रहा है, चीख रहा है।"[24]

इस प्रकार कवि रघुवीर सहायजी की कविताएँ मानवतावाद को दिखलाने के लिए हिस्सा लेती है, सच्चाई को उसकी अराजक, जटिल तीव्रता में घेरती, खोजती और चरितार्थ करती है।

रघुवीर सहायजी की कविता जीवन के इतनी समीप आ गई है कि कविता में और जीवन में फर्क नहीं रह गया है। उनकी कविता "ठेठ अपने समय की कोख से जनमी" कविता है। कवि ने आज की विसंगत और विद्रूप व्यवस्था में व्यक्ति जीवन की निरीहता को महसूस किया था पर इन सारी स्थितियों के बाद भी उनमें विश्वास और आस्था का स्वर विद्यमान था। मूल्य विघटन को उन्होंने महसूस जरूर किया था पर मूल्यों का मोह वे नहीं छोड़ सके हैं। कवि को सच्चाई का बोध अवश्य है पर वह परास्त और परेशान नहीं हैं।

कवि ने आज की विषम परिस्थितियों के समाधान स्वरूप कला की कल्पना की। जिसमें मानवतावादी भावनाओं का विकास दिखाया। कवि रघुवीर सहाय को मानवता के प्रेम को प्रस्तुत करने में सफलता मिली है। आज की विषम स्थितियों के अन्धकार में मनुष्य अपने को अकेला और असहाय अनुभव करता है। कवि ने उसके अकेलेपन को व्यक्त किया है। पर कवि ने इस अंधकार, संत्रास और अकेलेपन को मानव की नियति नहीं, केवल वस्तुस्थिति माना है। इसीलिए इनकी कविताओं में अकेलापन एकदम "कटा हुआ नहीं हैं न ही समाज से एकदम विरत" है। अपनी निजता के साथ भी उसे समाज में ही रहना है। "हरी गहरी रात" कविता कवि के जीवन दर्शन को मानवतावाद के साथ व्यक्त करती है -

"झुककर देखता हूँ
एक के मुँह पर हँसी थी

रूका ज्यों ही, आँख उसने खोल दी
शाम से चुप हरी गहरी रात आखिर वक्त पा
उसके पिता से बोल दी।"[25]

रघुवीर सहाय ने मानवता को स्पष्ट करने के लिए व्यंग्य का सहारा भी लिया है। उनका कहना है अगर सच्ची मानवता लाना है तो राजनीति को तोड़ना चाहिए जो भ्रष्ट हो गयी है। "पिछले बीस वर्षो के समय में भारतीय मनुष्य की नियति एक भूल भूलैया में फँसी रही, महान भारतीय अतीत और उज्जवल भविष्य की प्रभा से उसके राज्यपालों उसके राजदूतों के मुखडे दमकते रहे। परन्तु उसकी अपनी देह और अपनी आत्मा में जाग न पड सकी।" रघुवीर सहाय तो यह भी मानते हैं कि "समाज को बदलना अब सम्पूर्ण राजनीतिक तन्त्र को बदलना है। रघुवीर सहाय राजनीतिक सच्चाइयों से कतराने को एक कायरता मानते हैं और उनको विश्वास है कि यह कायर "टूटेगा" और मानवता का निर्माण होगा। आज़ादी मिले हमें बीस वर्ष हो गए हैं इन बीस वर्षों में जो आडम्बर, ढोंग, स्वार्थ और झूठ फैला है, वह कल्पनातीत है। सत्ताधारी और सुविधाभोगी वर्ग केवल अपने हित और अपने हक में डूबा है। कवि का आक्रोश इसलिए निरर्थक नहीं कहा जा सकता-

"गाँव-गाँव में दिया जन-जन को विश्वास
नेकराम नेहरू ने
कि अन्याय आराम से होगा आम राय से
होगा नहीं हो
कुछ नहीं होना गाव का।"[26]

× × ×

"महासंघ का मोटा अध्यक्ष
धरा हुआ है गद्दी पर
खुजलाता है उपस्थ
सर नहीं·····

हर सवाल का उत्तर देने से पेशेवर····
आँख मार कर पच्चीस बार हँसे वह, पच्चीस बार
हँसे बीस अखबार
एक नयी की तरह की हँसी यह।"[27]

दूसरी ओर आम आदमी की दशा कितनी दयनीय और निरूपाय है यह कहते हुए कवि का मानवतावादी हृदय कह उठा है -

"बीस वर्ष बीत गये
लालसा मनुष्य की तिल तिल कर मिट गई···
टूटते टूटते जिस जगह आकर विश्वास हो जाएगा
बीस साल
धोखा दिया गया
वही मुझे फिर कहा जाएगा विश्वास करने को
पूछेगा संसद में भोला भाला मंत्री
मामला बताओ हम कार्रवाई करेंगे
हाय हाय करता हुआ हां हां करता हुआ
हें-हें करता हुआ -
दल का दल
पाप छिपा रखने के लिए एक जुट होगा
जितना बड़ा दल होगा उतना ही खाएगा देश को।"[28]

इसप्रकार रघुवीर सहाय ने अपनी कविताओं में आज की भयावह दुनिया के सच्चे चित्र खींचे हैं। इनकी कविताओं में शासन तंत्र नंगा हो गया है। प्रजातंत्र के षडयंत्र को कवि ने आँख खोलकर देखा और समझा है। उसी की साफ सुथरी और सपाट अभिव्यक्ति अपनी कविताओं में की है।

कवि मानव विवेक की स्वतंत्रता को मानव प्रगति की प्राथमिक आवश्यकता मानता है। उसके मतानुसार वादों की एकांगी दृष्टि मानव प्रगति का भ्रम उत्पन्न कर सकती है, उसे संभव नहीं बना सकती। उसका सारा जोर मानव-विवेक को जाग्रत करने पर है। मानव-विवेक की हत्या करके मानव-मुक्ति की घोषणा करना कवि की दृष्टि में एक ढोंग है। इस ढोंग के बारे में कवि के भाव मानवतावादी रूप में उभरे हैं।

रघुवीर सहाय मानव के एकाकी असमर्थ, भयकातर, निराशा एवं पराजित रूप को स्वीकार करने के स्थान पर उसकी असीमित सहन शक्ति, अपराजेय आस्था एवं दु:ख पर कातरता को विशेष रूप में रेखांकित किया है। उनकी कविता में मानवीयता का रूप देखने के लिए मिलता है। जो मंत्रियों के हाथ में बंधा हुआ है। तब कवि मानव को आशा एवं कर्मठता का संदेश देता है -

"परराष्ट्र मंत्रियों ने दो नियम बताये
दो पारपत्र उसको जो उड़कर आये
दो पारपत्र उसको जो उड़कर जाये
पैदल को हम केवल तब इज़्जत देंगे
जब देकर के बंदूक उसे भेजेंगे
या घायल से घायल अदले-बदलेंगे।"[29]

निष्कर्ष

कवि रघुवीर सहाय ने अपने कविताओं के माध्यम से मानवतावाद को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। नारा लगाने से केवल गरीबी न हटती है, उसके प्रति व्याप्त भाव रघुवीर सहाय ने प्रदान किए हैं। कवि ने मानवतावाद को प्रस्तुत करते वक्त मानवतावाद के आड आनेवाली चीजों पर बड़ा जोर से प्रहार किया है। संस्कृति के बदलते मूल्यों में मानवता के अनेक प्रकार के भाव कवि रघुवीर सहाय की कविताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। मानव की अर्थहीन जिंदगी को प्रस्तुत

करना कवि का मुख्य उद्देश्य रहा है। कवि का कहना है कि सामुहिक प्रगति के बिना और मानवतावाद के बिना व्यक्ति को मुक्ति अर्थहीन है। कवि कहना चाहता है कि आज का आदमी बहुत क्रूर बन गया है। आदमी चीज बन गया है। आदमी अमानवीयकृत बना दिया गया है। आदमी-आदमी को खा रहा है। इसलिए आदमी पर से आदमी का विश्वास उठ गया है। मानव अपने को गतिशील मानकर गर्व का अनुभव कर रहा है किन्तु यह दृष्टि कृत्रिम प्रगति है। इसके बीच मानवता का नाश हो रहा है। मानवता को जिन्दा रखने का कवि हर समय प्रयत्न करता है। रघुवीर सहायजी ने अपने कविताओं के माध्यम से मानवता को जिन्दा रखने का प्रयत्न किया है। इसका परामर्श एवं मूल्यांकन करने का मैंने प्रयास किया है।

संदर्भ सूची

1· आधुनिक कवि और उनका काव्य - डॉ·दयानंद शर्मा, अन्नपूर्णा प्रकाशन, 127/1100, डब्ल्यू वन, साकेतनगर, कानपुर-208014, प्रथम संस्क·1989, पृ·46

2· आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय, राजकमल प्रकाशन प्रा·लि·,8,नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110 002, प्र·सं·1967, पृ·20

3· वही, पृ·30

4· वही, पृ·30

5· वही, पृ·37

6· वही, पृ·44

7· वही, पृ·57

8· वही, पृ·71

9· वही, पृ·24

10· नई कविता : कथ्य एवं विमर्श - डा·अरूण कुमार, चित्रलेखा प्रकाशन,170, आलोपी बाग, इलाहाबाद-211 006, प्र·सं·1988, पृ·140

11· आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय , राजकमल प्रकाशन प्रा·लि·,8, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110 002, प्र·सं·1967, पृ·81

12· वही, पृ·49

13· नई कविता : कथ्य एवं विमर्श - डा·अरूण कुमार, चित्रलेखा प्रकाशन,170, आलोपी बाग, इलाहाबाद-211 006, पृ·126

14· आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय, राजकमल प्रकाशन प्रा·लि·,8, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110 002, प्र·सं·1967, पृ·18

15· वही, पृ·20

16· वही, पृ·78

17· नई कविता : कथ्य एवं विमर्श - डा·अरूण कुमार, चित्रलेखा प्रकाशन,170, आलोपी बाग, इलाहाबाद-211 006, प्र·सं·1988, पृ·231

18· आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय, राजकमल प्रकाशन प्रा·लि·,8,नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110 002, प्र·सं·1967, पृ·22

19· वही, पृ·88

20· वही, पृ·73

21· वही, पृ·37

22· वही, पृ·29

23· काव्य परम्परा और नई कविता की भूमिका - डा·कमल कुमार, प्रेम प्रकाशन मन्दिर, 3012, बल्लीमारान, दिल्ली-110 006, प्र·सं·1988, पृ·39

24· वही, पृ·40

25· आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय, राजकमल प्रकाशन प्रा·लि·,8,नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110 002, प्र·सं·1967, पृ·31

26· वही, पृ·62

27· वही, पृ·16

28· वही, पृ·90

29· हँसो हँसो जल्दी हँसो - रघुवीर सहाय, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नयी दिल्ली-110 002, द्वि·सं·1976, पृ·34